बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 120

मरम्मत और सुधार

वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने राजकोषीय मोर्चा दुरुस्त करने के मामले में अच्छा काम किया है। इसके साथ ही उन्होंने वित्तीय क्षेत्र में कुछ ऐसे नवाचार किए हैं जिनका दूरगामी असर होगा। उन्होंने सार्वजनिक क्षेत्र की परिभाषा में भी कुछ बदलाव किए हैं। खेद की बात है कि कर के मामले में वित्त मंत्री ने भी उस पुरानी भारतीय परंपरा का निर्वाह किया है जिसमें अमीरों से वसूली की जाती है। आयात शुल्क सीमा में इजाफा किया गया है और पेट्रोलियम उत्पाद महंगे किए गए हैं। व्यय की बात करें तो पांच महीने पहले पेश किए गए अंतरिम बजट में बहुत कम बदलाव किए गए हैं। राजकोषीय जवाबदेही की प्रतिबद्धता प्रशंसनीय है लेकिन बजट के आंकड़ों से परे कहीं अधिक अहम बदलाव मुमकिन हैं।

पहले राजकोषीय प्रयास की बात करते हैं। वित्त मंत्री ने राजकोषीय घाटे को कम कर सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के 3.3 फीसदी पर लाकर अच्छा काम किया है क्योंकि कर आधार अंतरिम बजट के समय जताए गए अनुमान से काफी कम रहा है। वर्ष के संशोधित अनुमान निराशाजनक ढंग से अपेक्षा से दूर रहे। महालेखा नियंत्रक द्वारा दिए गए 'प्रारंभिक वास्तविक' आंकड़े से राजस्व में 1.6 लाख करोड़ रुपये की चूक नजर आई। सीतारमण ने अपने लंबे बजट भाषण में कहीं भी इसका जिक्र नहीं किया। फिर भी गत वर्ष कर राजस्व में आई कमी ने उन्हें कर राजस्व लक्ष्य में अंतरिम बजट की तुलना में 91,000 करोड़ रुपये कम करने पर मजबूर किया। बाकी फासले की भरपाई उच्च विनिवेश अनुमान और आरबीआई से मिलने वाले भारी भरकम लाभांश से की गई है। यह अच्छा प्रयास है लेकिन नए आंकड़ों में भी दिक्कत हो सकती है। अनुमान है कि कर राजस्व 18 फीसदी बढ़ेगा जबकि सांकेतिक जीडीपी 12 फीसदी से अधिक नहीं बढ़ेगी। बेहतर राजस्व के ऐसे अनुमान हमेशा कारगर नहीं रहते। पहली तिमाही में वस्तु एवं सेवा कर से प्राप्त राजस्व उत्साहजनक नहीं रहा है। व्यय के मोर्चे पर गत वर्ष के कई बिल बकाया हैं जिन्हें अब चुकाना होगा। अब यह साफ है कि खाद्य सब्सिडी का बिल चुकाने के लिए बजट से इतर ली गई 90,000 करोड़ रुपये की उधारी को कैसे वितरित किया जाएगा? घाटे के शीर्ष आंकड़े तक पहुंचने के लिए इतना पर्याप्त नहीं है और वह आंकड़ा विश्वसनीय भी नजर आना चाहिए। जहां तक कर क्षेत्र के प्रयासों की बात है तो शुल्क बढ़ाने की घातक प्रवृत्ति कोई-न-कोई वजह देकर जारी रखी गई है। यह संरक्षणवाद का उदाहरण है जिस पर नियंत्रण करना होगा। उच्च आयवर्ग पर लगने वाली कर दरों में लगातार इजाफा भी ऐसी ही घातक प्रवृत्ति है। पी चिदंबरम ने दो दशक पहले उच्चतम आय वर्ग पर 30 फीसदी कर लगाया था और वह दर अब तक अपरिवर्तित है लेकिन उसमें अधिभार और उपकर लगातार जोड़े जाते रहे हैं। नवीनतम वृद्धि के बाद प्रभावी उच्चतम दर 42 फीसदी हो गई है। इसका शायद ही विरोध हो क्योंकि सात करोड़ रिटर्न वाले इस देश में 50,000 से भी कम करदाता इस दायरे में आते हैं। लेकिन लंबी अवधि में इससे नुकसान होगा। शायद उच्च कर दर को संपदा शुल्क दोबारा लगाने का बेहतर विकल्प माना गया। कंपनी जगत की बात करें तो 25 फीसदी कर दर के लिए किसी कंपनी के टर्नओवर की सीमा को 250 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 400 करोड़ रुपये करना समझ से परे है। कुछ कर रियायतें खत्म करना और सभी कंपनियों के लिए सांकेतिक दर कम करना क्या बेहतर नहीं होता?

वित्त मंत्री अन्य सुधारात्मक प्रयासों में अधिक कल्पनाशील रही हैं। अगर वह सार्वजनिक कंपनियों में सरकारी हिस्सेदारी 51 फीसदी से कम करने का वादा पूरा करने में सफल रही हैं तो उन्हें इन कंपनियों को केंद्रीय सतर्कता आयोग, केंद्रीय जांच ब्यूरो और सीएजी की निगरानी से भी बाहर लाना होगा। यह देखना होगा कि परिचालन में अधिक आजादी मिलने से उनका प्रदर्शन भी बेहतर होता है या नहीं। इस बीच 44 श्रम कानूनों की जगह चार श्रम संहिताएं लाना, विदेशी निवेश के नए दरवाजे खोलना और इस्तेमाल नहीं हो रही सरकारी जमीन के वाणिज्यिक इस्तेमाल का प्रस्ताव अहम है। हालांकि पूरी हो चुकी ढांचागत परियोजनाओं की बिक्री और उससे मिले धन का इस्तेमाल नए ढांचागत निवेश में करने जैसे कदम भी उठाए जा सकते थे। अधिक रोचक बदलाव वित्तीय नवाचार के क्षेत्र में हैं। घरेलू बाजार के अलावा बाहर से भी उधार लेने का प्रस्ताव इसी श्रेणी में आता है। अगर इसे सुरक्षित दायरे में अंजाम दिया जाता है तो यह एक अच्छा विचार है। अगर भारत विदेश में 2.5 फीसदी दर पर उधार लेता है और तीन फीसदी दर से देता है तो वह घरेलू उधारी से सस्ता ही पड़ेगा। इससे घरेलू स्तर पर निजी निवेश के अधिक मौके बनेंगे। इस बीच बॉन्ड बाजार के प्रोत्साहन, एनबीएफसी से गुणवत्ता वाली परिसंपत्तियां खरीदने के लिए बैंकों को मंजूरी और विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों की राह आसान बनाने के लिए भी वादे किए गए हैं।

सवाल यह है कि क्या इस बजट में आर्थिक वृद्धि को बढ़ावा देने के लिए पर्याप्त प्रावधान किए गए हैं? वृद्धि दर के सात फीसदी रहने का आर्थिक समीक्षा का अनुमान आशावादी नजरिया ही दर्शाता है। हालांकि वित्त मंत्री ने मुश्किल राजकोषीय परिवेश में भी ब्याज दरों को नीचे रखने और वित्तीय क्षेत्र को मुश्किल दौर से निकालने में मदद देने जैसे मसलों का हल निकालने की कोशिश की है। देखना होगा कि उनका यह प्रयास काफी होता है या नहीं।

विनय सिन्हा

नई योजनाओं की शुरुआत पुराने कार्यक्रमों का विस्तार

बजट भाषण में एक जमी-जमाई टीम की सोची-समझी रणनीति नजर आती है। इस बारे में विस्तार से जानकारी दे रहे हैं **अजय शाह**

आम चुनाव के बाद का पहला बजट अगले पांच वर्षों के लिए सरकार की आर्थिक रणनीति में झांकने का मौका है। जुलाई 2019 के बजट भाषण का पूरा ध्यान योजनाओं पर है, और सरकार की भूमिका के विस्तार पर है। इस बाबत सबसे बड़ी चिंता इस बात को लेकर है कि क्या यह बजट बीते वर्ष की आर्थिक मंदी से पार पाने में मदद कर पाएगा। इस वक्त की सबसे बड़ी जरूरत यह है कि अर्थव्यवस्था में तेजी आए। अर्थव्यवस्था की यही तेजी सरकार की कल्याणकारी योजनाओं के लिए पैसा जुटाएगी।

नई सरकार का पहला बजट खासा अहम होता है। चुनाव के तुरंत बाद एक नई टीम को अपनी जड़ें जमानी होती है। हालांकि इस बार टीम पुरानी है। इसीलिए बजट भाषण में भी एक जमी-जमाई टीम की सोची-समझी रणनीति नजर आती है।

कुछ विश्लेषक इस बजट भाषण की आलोचना भी कर रहे हैं। उनके मुताबिक इस भाषण में तथ्यों का अभाव है। साथ ही, योजनाओं के ऐलान के बजाय उन पर विचार की बात कही गई है। इसके अलावा, वे इस बात को लेकर भी खासे नाराज हैं कि सरकार ने खर्च का तो ऐलान कर दिया, लेकिन उसके लिए राशि का प्रबंध नहीं किया। हालांकि मेरा मानना है कि हमें बजट भाषण को अगले पांच वर्षों के लिए सरकार के नीतिगत वक्तव्य के रूप में देखना चाहिए। इस नजरिये के साथ ये मोटा-मोटी आंकड़े असल में काफी उपयोगी भी हैं। यह बजट भाषण हमें अपने आर्थिक नीति-निर्धारकों के नजरिये में झांकने का मौका देता है। साथ ही, इससे हम अगले पांच वर्षों में सरकार की नीतियों को लेकर भी अनुमान लगा सकते हैं।

भारतीय जनता पार्टी की सरकार बीते कार्यकाल में कई कल्याणकारी योजनाओं को लेकर आई थी। पार्टी नेताओं की मानें तो हालिया चुनावों में मिली जबरदस्त सफलता इन्हीं योजनाओं का नतीजा है। इसी वजह से इस बजट में सरकार ने अपनी नई योजनाओं की शुरुआत और पुरानी के विस्तार ज्यादा जोर दिया है। इसी के साथ पैदा होता है संसाधनों का सवाल।

अंतरराष्ट्रीय अनुभव को देखा जाए तो कल्याणकारी सरकारों को कामयाबी मिली है, जब बाजार अर्थव्यवस्था ने अच्छे परिणाम दिए हैं। तेज आर्थिक विकास ही मोटे कर राजस्व को लेकर आती है, जिससे सरकार की कल्याणकारी योजनाओं को बल मिलता है। इसके उलट, अगर निजी क्षेत्र का तेजी से विकास नहीं हुआ, तो कल्याणकारी व्यवस्था ढेर हो जाती है।

इधर-उधर एक्का-दुक्का क्षेत्रों पर कर बढ़ाने से कर संग्रहण में तेजी नहीं आने वाली। अगर सरकार कर राजस्व को दोगुना करने के लिए गंभीर है, तो उसे विकास की रफ्तार दोगुनी करनी होगी। कल्याणकारी व्यवस्था को मजबूत करने के लिए हमें अपनी जड़ें मजबूत करनी होंगी। आर्थिक स्वतंत्रता और एक आधुनिक अर्थव्यवस्था के संस्थागत ढांचे का काम निजी क्षेत्र में उत्साह फूंकना है, जिससे निवेश की संभावनाएं और रोजगार के अवसर पैदा होते हैं। इससे विकास को रफ्तार मिलती है।

बीते कुछ वर्षों के आर्थिक आंकड़ों पर नजर डालें तो चेहरे पर शिकन पड़ना स्वाभाविक है। हमारी बाजार अर्थव्यवस्था का इंजन सुस्त पड़ रहा है। इससे सरकारी खजाने पर असर हो रहा है। जब विकास की रफ्तार सुस्त पड़ती है, तो घाटे-सकल घरेलू उत्पाद और कर्ज-सकल घरेलू उत्पाद जैसे बेहद जरूरी अनुपात भी बिगड़ जाते हैं। नतीजतन, सरकार को अब कर्ज लेने पर ज्यादा ब्याज का भुगतान करना पड़ता है।

आर्थिक सेहत के लिए सबसे प्राथमिक घाटा अहम होता है। अगर किसी देश ने बीते 10 वर्ष में से 8-9 में प्राथमिक घाटा नहीं दिखाया, तो आम तौर पर उसकी माली हालत को बेहतर समझा जाता है। आज के बजट आंकड़ों की मानें तो हम प्रति वर्ष 50,000 करोड़ रुपये के प्राथमिक घाटे में हैं। वैसे तो ये आदर्श स्थिति नहीं है, लेकिन हालत उतनी खराब भी नहीं है। इस घाटे को पाटना बहुत मुश्किल भी नहीं है। इसीलिए हम हमारी माली हालत अच्छी कही जा सकती है। हालांकि, इस बारे में विश्लेषकों को बेहद बारीकी से विश्लेषण करने की जरूरत है।

वहीं, राजकोषीय भार को नापने का दूसरा बड़ा मापक होता है ब्याज दर। बजट आंकड़ों के मुताबिक बीते वर्ष यह आंकड़ा 11.1 फीसदी, जबकि चालू वित्त वर्ष में 12.4 फीसदी रहने का अनुमान है। इस वक्त देश में करीब 4 फीसदी की महंगाई दर है। इस हिसाब से असल दर 7.1 फीसदी और 8.4 फीसदी रही हैं, जो बहुत ज्यादा है। देश के विकास दर से भी ज्यादा। इस वजह से देश में ब्याज और सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात बढ़ेगा। इस बारे में बजट से इतर दूसरे कर्जों के ब्याज दर को भी जोड़ना होगा, तभी इस बाबत एक सही तस्वीर उभरेगी।

इस बजट के आंकड़ों पर ध्यान दें तो एक बड़ी बात उभरती है, वह है सरकार का आकार। एक तेज और सफल अर्थव्यवस्था में सरकार का आकार बहुत छोटा होता है। इस बारे में हमें केंद्र सरकार के गैर ब्याज भुगतान पर नजर दौड़ानी होगी। बजट आंकड़ों के मुताबिक बीते वित्त वर्ष में इसमें 15.9 फीसदी की बढ़ोतरी हुई थी, जबकि इस वर्ष इसमें 13.7 फीसदी का इजाफा होने का अनुमान है। इसमें 4 फीसदी की महंगाई दर को हटा दें तो सरकार का गैर ब्याज खर्च 12 और 10 फीसदी की रफ्तार से बढ़ा है। यह बहुत ज्यादा है। 10 फीसदी के इजाफे के साथ तो सरकार का आकार सात वर्षों में दोगुना हो जाएगा। 12 फीसदी के हिसाब से तो यह महज 5.8 वर्ष में दोगुना हो जाएगा। यह सीधे-सीधे अर्थव्यवस्था के विकास में रोड़े डालेगा। एक सफल और तेज अर्थव्यवस्था निजी क्षेत्र के नवाचार और रचनात्मकता से आगे बढ़ती है।

क्या सरकार अगले पांच वर्षों में केंद्र सरकार के आकार को तेजी से बढ़ाना चाहती है? दरअसल, इसके पीछे दूसरे कारण भी हो सकते हैं। बजट के आंकड़े मुझे अक्सर बीते दशक के आंकड़ों की याद दिलाते हैं। वर्ष 2015 के बाद से महंगाई की दर में तेज गिरावट आई है। इससे पहले हम अक्सर महंगाई के लिए 8 फीसदी की दर को लेते थे, लेकिन भारतीय रिजर्व बैंक कानून में अब आरबीआई के लिए 4 फीसदी के महंगाई दर का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसीलिए रिजर्व बैंक का पूरा ध्यान अब 4 फीसदी के महंगाई दर को हासिल करने पर लगा सकता है। इसीलिए जब हमें 4 फीसदी महंगाई दर की आदत हो जाएगी, तो हम निचले स्तर के आंकड़ों को भी स्वीकारने लग जाएंगे।

एक वक्त देश में 12 फीसदी की विकास दर की बातें आम होती थीं और राजकोषीय योजना में उसे जगह भी मिलती थी। उस वक्त तो 8 फीसदी महंगाई दर के साथ असल विकास दर 4 फीसदी ही मानी जाती थी। अब जब महंगाई दर आधी रह गई है, तो 12 फीसदी का मतलब 8 फीसदी असल विकास होता है। मतलब देश की अर्थव्यवस्था हर नौ साल में दोगुनी हो जाएगी। सरकार की आर्थिक और राजकोषीय नीतियों को भी हकीकत के धरातल पर उतरना होगा।

अप्रत्यक्ष कर में जरूरी बदलाव लेकिन सुधारों का रहा अभाव

सुकुमार मुखोपाध्याय

अप्रत्यक्ष कर में बदलाव प्रमुख तौर पर सीमा शुल्क में ही किए गए हैं क्योंकि बजट में जीएसटी में कोई तब्दीली नहीं की जा सकती। परंतु प्रक्रियागत सुधार को लेकर कुछ सुझाव अवश्य दिए गए हैं, जिन पर जीएसटी परिषद की सहमति जरूरी होगी। इलेक्ट्रॉनिक इनवॉइस को ऐसे तैयार करने की बात कही गई है कि वह ई-वे बिल की तरह काम करेगा और अनुपालन का बोझ कम होगा। इससे प्रक्रिया में काफी सुधार होगा और वस्तुओं का आवागमन सुगम होगा। इससे कर वंचना की आशंका कम होगी। 5 करोड़ रुपये से कम वाले करदाताओं के लिए सहज मासिक रिटर्न पर विचार हो रहा है, यह भी एक बड़ा सुधार होगा। पूर्ण स्वचालित जीएसटी मॉड्यूल भी बड़ी राहत लेकर आएगा। सीमा शुल्क की बात करें तो मेक इन इंडिया को बढ़ावा देने के लिए काजू, पीवीसी, विनाइल फ्लोरिंग, मेटल फिटिंग, सीसीटीवी और कई अन्य चीजों को लेकर उच्च संरक्षणवादी रुख दिखाया गया है। उन वस्तुओं के लिए उच्च संरक्षण की मांग हमेशा रहती है जो भारत में नहीं बनतीं लेकिन जिन्हें यहां बनाए जाने की जरूरत है। जो कारोबारी इन्हें बनाना चाहते हैं वे उन पर उच्च शुल्क की मांग करते हैं। ऐसी दर तलाश करना काफी मुश्किल है, जो आयातकों को कारोबार से बाहर भी न करे और नए विनिर्माताओं के लिए भी सहायक सिद्ध हो। यही कारण है कि ऐसे कई इलेक्ट्रॉनिक उत्पादों पर से शून्य शुल्क की व्यवस्था समाप्त की जा रही है जो अब भारत में बनते हैं। यह सही कदम है। पाम स्टियरिन (पाम के तेल से निकली वसा) फैटी एसिड और कई तरह के कागजों पर से अंतिम उपयोग आधारित रियायत समाप्त की जा रही है। यह भी सही कदम है क्योंकि ऐसी रियायत आर्थिक दृष्टि से भी और क्रियान्वयन के नजरिये से भी बहुत नुकसानदेह थी।

लीगेसी रिजॉल्यूशन स्कीम नामक एक बड़ी योजना पेश की जा रही है जो जीएसटी के लागू होने के पहले उत्पाद और सेवा कर के लंबित मामलों को हल करेगी। एक अनुमान के मुताबिक ऐसे मामलों में 3.75 लाख करोड़ रुपये की राशि फंसी है। इससे विभाग को भारी राहत मिलेगी और तमाम विधिक प्रकरण समाप्त होंगे। एक निस्तारण आयोग पहले से मौजूद है, उसे भी यह काम सौंपा जा सकता है। इस योजना का पूरा नाम है- सबका विश्वास लीगेसी डिस्प्यूट रिजॉल्यूशन स्कीम।

शुल्क दर में बढ़ोतरी की काफी आलोचना की जाएगी। न्यूजप्रिंट जो पारंपरिक रूप से शुल्क मुक्त रहा है, उस पर अब 10 फीसदी शुल्क लगाया गया है। यह शुल्क समाचार पत्र-पत्रिकाओं की छपाई में इस्तेमाल होने वाले कागज पर लगाया गया है। समाचार पत्र इसका विरोध करेंगे। मुद्रित पुस्तकों पर 5 फीसदी आयात शुल्क लगाया गया है। कहा गया है कि इससे देश में पुस्तकों के छपने की संभावना बढ़ेगी। यह तर्क सही नहीं है। यह कर लगाने से किताबों के बाहर छपने पर कोई अंतर नहीं आएगा।

शुल्क ढांचे में एक बड़ा सुधार काजू गिरी आदि पर लगने वाले शुल्क को यथामूल्य करके किया गया है। कपड़ा-वस्त्र आदि वस्तुओं समेत कई अन्य चीजों पर इसे लागू कर इसका स्वरूप विस्तार किया जा सकता था। यह याद रखना चाहिए कि अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने सन 1991 के उदारीकरण के समय जो शर्तें रखी थीं उनमें एक शर्त यह भी थी कि तयशुदा शुल्क को यथामूल्य में तब्दील किया जाए। उस वक्त इसे बड़े पैमाने पर हासिल किया गया था लेकिन कुछ वस्तुएं रह गई थीं।

शुल्क दर को तार्किक बनाने का लक्ष्य हासिल नहीं हुआ। अगर हम सीमा शुल्क दर पर एक नजर डालें तो पता चलता है कि दरों के सहजीकरण के जरिये उन्हें तार्किक बनाने की गुंजाइश मौजूद है वह भी बिना शुल्क गंवाए। कागज, वस्त्र, मशीनरी और उपकरण आदि इसके उदाहरण हैं जहां कई तरह की शुल्क दरें बरकरार हैं। कागज पर केंद्रित चैप्टर 48 बताता है कि अधिकांश मामलों में शुल्क दर 10 फीसदी है। लेकिन एक दर 20 फीसदी भी है। अगर इसे भी 10 फीसदी कर दिया जाए और कुछ रियायत हटा ली जाए तो तमाम कागज 10 फीसदी दर के दायरे में आ जाएंगे। इससे नमूना लेने और प्रयोगशाला में जांचने की दिक्कत समाप्त हो जाएगी। रेशम संबंधी चैप्टर 50 में अधिकांश रेशम के लिए शुल्क दर 25 फीसदी है लेकिन चुनिंदा मामलों में यह 30 फीसदी भी है। कपड़ा संबंधी चैप्टर 51 का भी यही हाल है। कपास संबंधी चैप्टर 52 में 20, 25 और 30 फीसदी की शुल्क दरों के अलावा कुछ विशिष्ट शुल्क भी हैं। कपड़ा क्षेत्र में सभी दरों को 25 फीसदी करना बहुत बड़ा सहजीकरण होगा। राजस्व को लेकर आकलन किया जा सकता है और चैप्टर 84 के लिए अनिवार्य सुधार किए जा सकते हैं जो मैकेनिकल मशीनरी से संबंधित है। यहां सामान्य दर 7.5 फीसदी और कुछ मामलों में 10 फीसदी है। इलेक्ट्रिकल मशीनरी से संबंधित चैप्टर 85 में 7.5, 10 और 15 फीसदी की दरें हैं। चैप्टर 90 के उपकरणों के लिए 7.5 फीसदी और 10 फीसदी की दरें हैं। अधिकांश वस्तुएं 7.5 फीसदी की दर के दायरे में हैं। अगर सभी चैप्टरों में शुल्क दर 7.5 फीसदी कर दी जाए तो तमाम तरह की मशीनरी का भेद और इसके लिए जरूरी विशेषज्ञों की सलाह की जरूरत भी समाप्त हो जाएगी। आमतौर पर देखें तो निचले दायरे में चार शुल्क दर हैं 5 फीसदी, 7.5 फीसदी, 10 फीसदी और 15 फीसदी। अगर 7.5 फीसदी की दर समाप्त हो जाती है और केवल 5 फीसदी, 10 फीसदी और 15 फीसदी की दर रह जाती हैं तो बहुत हद तक सहजीकरण हो जाएगा, बशर्ते एक चैप्टर, एक दर का नियम माना जाए। रेफ्रीजरेटर, एयर कंडीशनर और बाल बियरिंग जैसी कुछ चीजों को अपवाद माना जा सकता है। न्यूजप्रिंट और किताबों को छोड़ दिया जाए तो बजट में सीमा शुल्क दरों में बदलाव बेहतरी के लिए है लेकिन इस दौरान दरों को लेकर कोई आम सुधार देखने को नहीं मिला।

राजस्व पूर्वानुमान अवास्तविक

नितिन देसाई

किसी बजट के वृहद-आर्थिक प्रभाव का आकलन बुनियादी रूप से इस पैमाने पर किया जाता है कि इसके कराधान और उधारी संबंधी प्रस्तावों के जरिये सरकार परिवारों और कंपनी जगत से कितनी मांग पैदा करने में सफल होती है? सरकार की तरफ से किए जाने वाले व्यय की मात्रा भी वृहद-आर्थिक सेहत के लिए मायने रखती है। बजट ने गत वर्ष के संशोधित अनुमान के बरक्स अपने बजट अनुमानों के आंकड़े पेश कर दिए हैं। हालांकि बजट के जुलाई में पेश किए जाने से हमारे पास महालेखा नियंत्रक द्वारा दिए गए अनंतिम वास्तविक अनुमान हैं जो फरवरी 2019 में पेश अंतरिम बजट में रखे गए संशोधित अनुमानों से काफी अलग हैं। बजट पूर्वानुमान में दर्ज वृद्धि दर के आधार रूप में अनंतिम वास्तविक आंकड़ा कुल प्राप्तियों का 25 फीसदी और कुल व्यय का 20.5 फीसदी है। राजस्व पूर्वानुमान अवास्तविक लग रहे हैं। वास्तविक वृद्धि दर के सात फीसदी रहने और मुद्रास्फीति के 3-5 फीसदी दायरे में रहने पर सांकेतिक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) वृद्धि दर 10-12 फीसदी रहेगी। राजस्व अनुमान में 2 फीसदी से अधिक लचीलापन है जबकि ऐसा होने के आसार नहीं हैं। साफ तौर पर वर्ष 2018-19 के अनंतिम वास्तविक राजस्व में आई 1.67 लाख करोड़ रुपये की कमी का संज्ञान नहीं लिया गया है। पूरी संभावना है कि घाटे का आंकड़ा लक्ष्य के भीतर रखने के लिए इस साल के अंत तक सब्सिडी भुगतान में कोई बाजीगरी देखने को मिले। वास्तविक घाटा बजट के 3.3 फीसदी लक्ष्य से अधिक 4 फीसदी के करीब रहने की उम्मीद है।

वित्त वर्ष 2019-20 के बजट में सरकार ने अपनी परिसंपत्तियों की बिक्री से 1.05 लाख करोड़ रुपये आने का अनुमान जताया है जो 2018-19 में हासिल 80 हजार करोड़ रुपये से अधिक है। सरकार की तरफ से परिसंपत्ति बिक्री कर्ज के बोझ से दबे प्रवर्तक द्वारा अपनी देनदारियां पूरी करने के लिए कुछ परिसंपत्तियों की बिक्री से कोई खास अलग नहीं है। मुख्य आर्थिक लाभ तब होगा जब परिसंपत्ति बिक्री के साथ प्रबंधन भी किसी निजी खरीदार के पास चला जाए ताकि वह इस संपत्ति का बेहतर इस्तेमाल कर सके। महज कुछ शेयरों की सीधी बिक्री या ईटीएफ के जरिये बिक्री होने से वित्त मंत्रालय को घाटे की लक्षित सीमा के भीतर टिके रहने में मदद मिल सकती है। लेकिन अगर परिसंपत्ति बिक्री प्रक्रिया का इस्तेमाल मौजूदा उपभोग के लिए वित्त जुटाने में होता है तो घाटे को काबू में रखने के लाभप्रद असर कमोबेश गायब हो जाएंगे। दूसरी तरफ अगर उनका इस्तेमाल नए निवेशों के जरिये ठोस परिसंपत्ति बनाने में होता है तो यह सरकार की परिसंपत्ति पोर्टफोलियो पुनर्गठित करने जैसा होगा और मध्यावधि या दीर्घावधि में उससे आर्थिक लाभ भी हो सकते हैं। इस बजट में केंद्र सरकार का प्रत्यक्ष पूंजीगत व्यय गत वर्ष की तुलना में 11.8 फीसदी अधिक रखा गया है जबकि राजस्व व्यय 21.9 फीसदी ज्यादा है। इससे यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि परिसंपत्ति बिक्री से हासिल रकम मौजूदा उपभोग में ही लग जाएगी।

सरकार की उधारी जरूरत मुख्य रूप से बाजार उधारी से पूरी होती है और एक तिहाई वित्त छोटी बचत एवं भविष्य निधि कोषों से आता है। वर्तमान प्राप्तियों और व्यय के बीच का अंतर ही उधारी जरूरत को दर्शाता है। इस साल केंद्र सरकार की बाजार उधारी जीडीपी का करीब 2.2 फीसदी रहने का अनुमान है। भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने वित्त वर्ष 2018-19 में नई जारी करीब 75 फीसदी सरकारी प्रतिभूतियां अपने पास रख लीं ताकि गैर-बैंकिंग वित्त कंपनियों (एनबीएफसी) संकट से हलकान बाजान में तरलता लाई जा सके। सरकारी ऋण

की बड़े पैमाने पर विमुक्ति 2019-20 में शुरू होगी और नए वित्त वर्ष में सकल उधारी काफी अधिक रहेगी। मौजूदा राजकोषीय दायित्व एवं बजट प्रबंधन (एफआरबीएम) नियमों की समीक्षा के लिए गठित एन के सिंह समिति ने वर्ष 2022-23 तक केंद्र सरकार का कर्ज एवं जीडीपी अनुपात 40 फीसदी रखने की अनुशंसा की है। वर्तमान में यह अनुपात करीब 48 फीसदी है और इस वित्त वर्ष में तो इसमें कमी की खास गुंजाइश नहीं है। बजट में मध्यम अवधि के अनुमानों को देखें तो सिंह समिति के लक्ष्य को हासिल कर पाना संभव नहीं लगता है।

राज्य सरकारों एवं सार्वजनिक उपक्रमों से आने वाली मांगों को भी जोड़ लें तो कुल सार्वजनिक उधारी जरूरत जीडीपी का करीब नौ फीसदी होगी जो परिवार के स्तर की समूची वित्तीय बचत को ही निगल जाती है। इस बजट में सरकार ने यह ऐलान किया है कि वह उधारी जरूरतों का कुछ हिस्सा बाहरी स्रोतों से भी जुटाना चाहती है। शायद सरकार के कुछ लोगों ने यह अंदाजा लगाया है कि अपनी सॉवरेन निवेश रेटिंग के चलते इसमें कितनी लागत आएगी?

ऋण बाजार की हालत भी वृहद-आर्थिक परिदृश्य के लिए एक बड़ी चिंता की बात है। भले ही बैंकों के फंसे कर्ज (एनपीए) की समस्या काबू के भीतर आती हुई लग रही है लेकिन एनबीएफसी क्षेत्र का संकट अब तक हल नहीं हुआ है। इस समस्या के मूल में परिसंपत्ति देनदारी का बेमेल होना है क्योंकि एनबीएफसी ने बैंकों और म्युचुअल फंडों से कम अवधि के कर्ज लेकर इन परिसंपत्तियों को फंड मुहैया कराया था। दो बड़ी कंपनियों की कर्ज अदायगी में चूक को ध्यान में रखने के साथ ही हमें यह भी देखना होगा कि अधिक सक्षम एनबीएफसी भी बैंकों की अति-सजगता और लिक्विड एवं डेट म्युचुअल फंडों द्वारा रेटिंग की गहन समीक्षा किए जाने से मुश्किल दौर का सामना कर रही हैं। लिक्विड एवं डेट फंडों में बड़ी होल्डिंग उन कंपनियों के पास है जिनके ट्रेजरी विभाग अपने अतिरिक्त फंड को रखने के लिए अधिक सुरक्षित विकल्प तलाशने में काफी सजगता दिखा रहे हैं।

एनबीएफसी नकदी की कमी से जूझ रहे प्रवर्तकों, प्रॉपर्टी डेवलपरों, छोटे उद्योगों और घर एवं टिकाऊ उत्पाद के खरीदारों के लिए फंड जुटाने का महत्त्वपूर्ण जरिया रही हैं। लेकिन अब उनसे कर्ज नहीं मिल पाने से निजी निवेश को प्रोत्साहित करने का लक्ष्य हासिल करने में भी अड़चन आएगी। मजबूत क्रेडिट रिकॉर्ड वाली एनबीएफसी की उधारी को बैंक गारंटी देने के बारे में रखा गया बजट प्रस्ताव निश्चित रूप से मदद करेगा। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में 70,000 करोड़ रुपये की पूंजी डालने की प्रतिबद्धता भी तरलता स्थिति में सुधार लाएगी। उम्मीद है कि इससे ब्याज दरों का संचरण बेहतर होगा और एनबीएफसी संकट उत्पन्न होने पर फैला ऋण जोखिम भी कम होगा। इस बजट ने राजकोषीय प्रबंधन में कुछ जोखिम उठाया है और घाटा (एवं सरकारी उधारी जरूरत) इसके पूर्वानुमान से कहीं अधिक हो सकती है। स्टार्टअप और छोटी-मझोली इकाइयों में निवेश बढ़ाने के लिए उठाए गए कदम, आयकर सीमा बढ़ाने से उपभोग मांग बढ़ने की उम्मीद और तरलता एवं क्रेडिट प्रवाह बढ़ाने के लिए उठाए गए कदमों से आर्थिक वृद्धि को कुछ प्रोत्साहन मिलेगा। लेकिन निर्यात बढ़ाने और पूंजी की वास्तविक लागत कम करने की दिशा में कदम उठाए जाते तो बेहतर होता। आर्थिक समीक्षा में भी इन कदमों की वकालत की गई थी।